संगीत त्रिवेणी

(गायन-वादन-नर्तन)

उत्तर भारतीय संगीत (गायन, वादन, नृत्य) के विविध आयाम

डॉ. आनंद तिवारी
प्राचार्य/संरक्षक

डॉ. हरिओम सोनी
सम्पादक

डॉ. अपर्णा चाचोंदिया
सम्पादक

आयोजक-संगीत एवं नृत्य विभाग

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय सागर (म.प्र.)

प्रकाशक : रागी पब्लिकेशन एण्ड इंटरप्राइजेज
चैतन्य हास्पिटल के पास में, सैनी के कुआँ के सामने,
वृन्दावन वार्ड, तिली रोड, सागर (म.प्र.)
ई मेल : ragipublicationandenterprises@gmail.com
सम्पर्क : 9039515004

प्रकाशन वर्ष : 2023

संस्करण : प्रथम

मूल्य : 300/-

सम्पादक मंडल :
डॉ. हरिओम सोनी
डॉ अपर्णा चाचोंदिया

Book Name-Sangeet Triveni
ISBN.No.-978-93-340-4240-5

अक्षर संयोजन एवं मुद्रण
रॉयल कम्प्यूटर्स,
वनवे परकोटा रोड, सागर (म.प्र.)
मो. : 9425452106

नोट–प्रस्तुत प्रोसिडिंग में शामिल किये गए समस्त शोध पत्रों की सामग्री एवं तथ्यों की सम्पूर्ण जबाबदारी लेखकों की होगी इस हेतु सम्पादक या समिति किसी प्रकार से जिम्मेदार नहीं होगी।

अनुक्रमणिका

क्र	विषय	पृष्ठ
1.	भारतीय राग चिकित्सा – समालोचनात्मक विश्लेषण **डॉ. अवधेश प्रताप सिंह तोमर**	01
2.	नृत्यकला एवं रासलीला **डॉ. अपर्णा चाचोंदिया**	07
3.	वर्तमान परिवेश में संगीत घरानों की प्रासंगिकता **डा. प्रेम कुमार चतुर्वेदी**	11
4.	विकसित अवनद्य वाद्य – तबला (एक दृष्टिपात) **डॉ. विभूति मलिक**	17
5.	नृत्य कला में नायिका भेद **प्रो. डॉ. नीता गहरवार**	22
6.	संगीत में घराने – गुण एवं दोष **प्रो. डॉ. अलकनंदा पलनीटकर**	26
7.	गुप्त कालीन संगीत, गायन एवं वादन **प्रॉफसर नवीन गिडियन**	30
8.	बंदिश एवं नवसृजन **पंडित देवेन्द्र वर्मा**	34
9.	हिन्दी के गीतों में संगीत **डॉ. नरेन्द्र सिंह ठाकुर,**	43
10.	देश के सामाजिक आर्थिक विकास में संगीत कलाकारों की भूमिका **प्रोफेसर नित्यानंद चौधरी**	46
11.	प्राचीन ताल पद्धति का विश्लेषणात्मक विवेचन **डॉ. गुलशन सक्सेना**	51
12.	ताल के दस प्राण **हरविंदर बीर कौर**	55
13.	संगीत, संस्कृति और समाज **डॉ. मालती दुबे**	59
14.	संगीत कला का व्यवसायीकरण **डॉ. प्रियंका शेण्डे**	61
15.	कत्थक नृत्य में नायिकाओं की अष्टावस्था **प्रो. वन्दना चौबे**	65

16. कला का व्यवसायीकरण और सोशल मीडिया की भूमिका — 72
एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
डॉ. रश्मि शर्मा

17. संगीत संस्कृति और समाज — 78
डॉ. डी.के. गुप्ता

18. **मानव जीवन में संगीत और स्वास्थ्य** — 80
श्रीमती रागिनी श्रीवास्तव

19. भारतीय संगीत के विविध आयामों में महिलाओं की स्थिति और भूमिका — 84
प्रीति वर्मा

20. विभिन्न संगीत शैलियों के साथ विभिन्न तालों का सामांजस्य — 88
शैलेन्द्र सिंह राजपूत

21. संगीत में अवनद्ध वाद्यों का विकास एवं महत्व संदर्भ–तबला — 92
शैलेन्द्र वर्मा/डॉ. रवि कुमार पण्डोले

22. भारतीय संगीत गायन के विविध आयाम — 96
डॉ. जितेन्द्र कुमार शुक्ला

23. हिन्दी साहित्य में चौमासा (आषाढ़, सावन, भाद्रपद, अश्विन) — 100
लोक, ललित का मूल आधार
राघवेन्द्र प्रताप सिंह/डॉ. सुजीत देवघरिया

24. युवा पीढ़ी का पाश्चात्य संगीत की ओर रूझान — 106
कृष्ण कुमार कटारे

25. महिलाओं से संबंधित मनोविकारों के निवारण में — 108
संगीत चिकित्सा की प्रासंगिकता
वर्षा मीणा/डॉ. संतोष मीणा

26. भारतीय रंगमंच का स्वरूप एवं सांस्कृतिक परंपरा — 114
अंजलि वर्मा

27. तबले की उपशास्त्रीय वादन शैली — 117
डॉ राहुल स्वर्णकार

28. बुन्देली लोकगीतों में सांस्कृतिक चेतना — 123
डॉ. सरिता जैन

29. मनोचिकित्सा में संगीत का प्रयोग — 125
डॉ. हरीश वर्मा

30. अभ्यास एवं साधना (आध्यात्मिक अध्ययन) — 128
आकाश जैन

31. सितार वादन करने हेतु तकनीक का महत्व–एक अध्ययन — 132
डॉ. अमनदीप कौर

32. शास्त्रीय संगीत, नृत्य में रोजगार के अवसर 138
गरिमा भार्गव

33. कथक नृत्य की धार्मिक एवं आध्यात्मिक पृष्ठभूमि 140
डॉ. योगिता मंडलिक

34. धार्मिक पृष्ठभूमि पर अवस्थित नृत्यकला 142
कल्पना कुमारी

35. उत्तर भारतीय संगीत (गायन, वादन, नृत्य) 146
के विविध आयाम संगीत, संस्कृति और समाज
अनुराग गुरु

36. मध्यभारत के प्रमुख जनजातीय नृत्यों में अवनध वाद्यों की भूमिका 149
सरगम खान

37. संगीत संस्कृति और समाज 154
अमोल शेषराव गवई

38. संगीत और साहित्य का अंर्न्तसंबंध 156
सत्येंद्र सिंह पटेल

39. धार्मिक पृष्ठभूमि पर अवस्थित नृत्यकला कथक नृत्य एवं ईश्वर उपासना 159
सुश्री योगिता सरोया

40. विभिन्न ग्रंथों में वर्णित अवनद्य वाद्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन 161
तेजस्स पटैल

41. कथक नृत्य प्रस्तुति में आहार्य अभिनय 166
डॉ. संगीता ठाकुर

42. भारतीय शास्त्रीय नृत्यों में प्रयोगधर्मिता कथक नृत्य के संदर्भ में 169
डॉ. अमित साखरे

43. संगीत, संस्कृति एवं समाज 172
डॉ. रविन्द्र कुमार ध्रुवे

44. संगीत का स्वास्थ्य में योगदान 174
पायल कुमारी

45. कथक नृत्य प्रदर्शन में तुलसीकृत रचनाओं की उपादेयता 177
सुश्री रेखा मालवीय

46. ताल के दस प्राण 180
डॉ. कृष्णा बाला सिंह

47. धार्मिक पृष्टभूमि पर अवस्थित कथक नृत्य 185
डॉ नरेन्द्र कुमार ध्रुव

48.	गुप्त कालीन नृत्य एवं अभिनय **डॉ. अंजलि दुबे**	188
49.	मार्ग और देशी संगीत कलाऐं **विशाखा तिवारी मिश्रा**	191
50.	तबला स्वतंत्र वादन में गत वादन का स्वरुप एवं महत्व (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) **गगन राज/आकाश जैन**	196
51.	संगीत के अध्ययन–अध्यापन में ई–संसाधनों की भूमिका **मितेन्द्र सिंह सेंगर**	200
52.	New teaching policy 2020 and today's student with music subject **Dr. HARIOM SONI**	206
53	CHEMISTRY BEHIND THE MUSIC **Dr. A.H. Ansari**	208
54.	The Dynamism of Indian painting under the patronage of the Mughals **Dr. Ashish Kumar Chachondia**	211
55.	Interrelation between music and chemistry: An Overview **Dr. Santosh Narayan Chadar**	215
56.	Music and Mental Health **Mayuresh Namdeo/ Dr. Santosh Kumar Gupta**	219
57.	Creativity in Choreography by Kumudini Lakhia, an Initial Journey **Jayti Brahmbhatt / Prof. Vandana Chaubey**	225
58.	DANCE BASED ON RELIGIOUS BACKGROUND **Kavisha Sabharwal**	228
59.	Personality Development and Employment Prospects Through Classical Dance **Mrs. Manjusha Rajas Johari / Prof. Vandana Chaubey**	232
60.	Use of music in EFL [English as a foreign language] **Mrs. Vibha Soni**	235
61.	Contribution of Women in Dance **Arshdeep Kaur Bhatti**	237
62.	Utility of Music in Indian Society **Priyam Chaturvedi**	241
63.	Music as an incredible medicine: A cure for wide range of diseases and disorders **Vaishali Prajapati**	245
64.	Psychology and Music Therapy **Koustubh Pare**	251
65.	The Importance of Music Education in India **Vishal V. Korde**	254
66.	Ten Elements of Taal (Taal Ke Das Pran) **Sompura Krupal Chetanbhai**	259

"नृत्यकला एवं रासलीला"

डॉ. अपर्णा चाचोंदिया

सहायक प्राध्यापक (नृत्य)

शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश –

मानवीय भावों की सौन्दर्यपूर्ण अभिव्यक्ति 'कला' कहलाती है। जब हम अपने भावों की अभिव्यक्ति विभिन्न अंग भंगिमाओं, मुद्राओं, सुन्दरतम् अंगस्थितियों एवं अनुकूल भावों के द्वारा प्रदर्शित करते हैं तो 'नृत्यकला' की उत्पत्ति होती है 'नृत्यकला' एक प्रदर्शनकारी कला है, जिसमें नर्तक स्वयं आनंद की अनुभूति करता है एवं अपनी प्रस्तुति के द्वारा दर्शकों में भी रस की सृष्टि करता है। प्राचीन ग्रंथों में 'मार्ग' एवं 'देशी' दो प्रकार के नृत्य कहे गए हैं, जिन्हें हम आज शास्त्रीय नृत्य एवं लोकनृत्य के नाम से जानते हैं। भारतीय संस्कृति में नृत्य को धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्ता प्रदान की गई है। हमारे देश में नृत्य को केवल मनोरंजन का साधन नहीं समझा जाता बल्कि इसे ईश्वर उपासना की वस्तु समझा जाता है। क्योंकि यह देवताओं से उत्पन्न कला है।1 देवताओं से 'नृत्यकला' की उत्पत्ति एवं इस कला के पृथ्वी पर अवतरण से संबंधित अनेकों कथाएं नृत्य जगत में प्रचलित हैं। चाहे शास्त्रीय नृत्य हों या लोकनृत्य सभी की पृष्ठभूमि धार्मिक ही है, जिस तरह शास्त्रीय नृत्यशैली में इष्टदेव की वंदना से नृत्यारंभ होता है, उसी तरह लोकनृत्यों में भी ईश्वर के आवाहन के उपरांत ही अपनी नृत्यकला प्रस्तुत करने की परम्परा है। नृत्यकला में केवल प्रारंभ में ही ईश्वर को याद नहीं किया जाता, अपितु ईश्वर उस नृत्य प्रस्तुति में एक महत्वपूर्ण भूमिका में सदैव विद्यमान रहते हैं। भगवान श्री कृष्ण का एक नाम रसिक बिहारी भी है, जिनके स्मरण मात्र से विभिन्न रसों की अनुभूति स्वतः ही होने लगती है। भगवान श्री कृष्ण की लीलाओं पर आधारित रासलीला एवं भारतीय नृत्यकला दोनों ही एक दूसरे से अभिन्न है जिसको इस शोध पत्र के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द – शास्त्रीय नृत्य, लोकनृत्य, रासलीला, धार्मिक

नृत्यकला का इतिहास उतना ही पुराना कहा जा सकता है, जितना कि मानव के जन्म का। मानव जन्म से ही अपने भावों को व्यक्त करने के लिए विभिन्न अंग भंगिमाओं, मुख भावों एवं मुद्राओं द्वारा अपने भावों को अभिव्यक्त करने की चेष्टा करता है जिसमें नृत्यकला भावों की भाषा के रूप में अभिव्यक्ति का आधार होती है। नृत्यकला के इतिहास का अध्ययन करते हुए जब हम इसकी विकास यात्रा में शामिल होते है तो हमारा साक्षात्कार 'रासलीला' से होता है जो पूर्ण रूप से भगवान श्री कृष्ण की लीलाओं पर आधारित है। जब भारत पर मुगलों का आक्रमण हुआ तब उन्होंने हमारे अनेकों मंदिरों को तोड़ दिया, साहित्यों को नष्ट किया लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाई। वैष्णव भक्तों द्वारा शुरू किए गए भक्ति आंदोलन से तत्कालीन समाज में एक अनोखी चेतना जागृत हो उठी। अत्याचारों से लड़ने की शक्ति निर्माण हो गई। उनके समस्त दुःख कृष्ण भक्ति में विलीन हो गए और समाज ने एक संगठित रूप धारण करना शुरू किया।

इस संपूर्ण प्रक्रिया में संतकाव्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस काव्यधारा ने नृत्य, गायन, वादन, चित्रकला जैसी ललित कलाओं को भी प्रभावित किया।2 यहाँ पर हम भारतीय नृत्यकला और रासलीला के अन्तर्सम्बन्धों पर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे। यदि हम भारतीय शास्त्रीय नृत्यों के प्रस्तुतिक्रम का अवलोकन करें तो लगभग सभी शास्त्रीय नृत्यों में भगवान श्री कृष्ण नायक एवं राधा जी नायिका के रूप में नृत्य की शोभा बढ़ाते हैं। उत्तर भारत का शास्त्रीय नृत्य 'कथक' जिस पर मुगलकाल की बहुत गहरी छाप पड़ी जो कि आज भी उसके स्वरूप में दिखाई देती है। यदि हम 'कथक' नृत्य के इतिहास का अध्ययन करते हैं तो वाल्मीकि मुनि को प्रथम 'कथक' कहा गया है क्योंकि सर्वप्रथम उन्होंने ही लव–कुश को भगवान श्री राम के जीवन चरित्र को कथा–गायन के रूप में सिखाया था। 'कथक' शब्द की प्राचीन परिभाषा प्रचलित है – 'कथा कहे सो कथक कहावे'। यदि इस परिभाषा के आधार पर हम कथक नृत्य का सम्बन्ध 'रासलीला' से स्थापित करते हैं तो दोनों में गहरा सम्बन्ध दिखाई देता है। 'रासलीला' में भगवान श्री कृष्ण की लीलाओं का प्रस्तुतिकरण किया जाता है और कथक नृत्य में भी अभिनय के माध्यम से कथाओं को नृत्य रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

रासलीला का संगठन निश्चय ही मन्दिरों में सेवारत कथकों के निर्देशन में हुआ होगा या यों कहें कि रासलीला के रूप में कथक नृत्य ने अपने प्राचीन कथात्मक नाट्यरूप को पुनः ग्रहण करने का एक अनूठा प्रयास किया। रास व कथक नृत्य के परस्पर विभेद या अन्योन्याश्रित सम्बन्धों को किसी प्रकार की चुनौती नहीं दी जा सकती।3 कथक नृत्य के प्रस्तुतिक्रम में अधिकतम रचनाएं भगवान श्री कृष्ण पर आधारित है जैसे कवित्त, गतभाव के माध्यम से प्रस्तुत की जाने वाली विभिन्न पौराणिक कथाएं या लीलाएं – पनघट लीला, माखन चोरी, होली आदि सभी श्री कृष्ण की ही लीलाएं हैं, इसके अतिरिक्त भजन, ठुमरी, इष्टवंदना आदि में भी श्री कृष्ण की आराधना या लीलाओं का वर्णन होता है। गत निकास में मुरली, मटकी, घूँघट आदि के द्वारा रासलीला के विभिन्न चरित्रों जैसे कृष्ण, राधा, गोपी आदि को ही प्रस्तुत किया जाता है। रासलीला में भी कथक नृत्य के बोल प्रयुक्त किये जाते है पद–संचालन एवं भ्रमरियों में भी साम्य दिखाई देता है। वैसे तो रास की परम्परा ब्रज में प्राचीनकाल से ही थी लेकिन श्री वल्लभाचार्य जी का नाम इसके पुनरूद्धारक के रूप में लिया जाता है। महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ने उस समय के दो कलाविदों को पकड़ा। उनके नाम स्वामी घमंडदेव तथा नारायण स्वामी थे। दोनों ही गायन, वादन, नर्तन तथा काव्य रचना में प्रवीण थे। कहा जाता है कि श्री वल्लभाचार्य जी ने मथुरा के आठ सुन्दर–सुन्दर चतुर्वेदी बालकों के यज्ञोपवीत कराकर उन्हें इन नृत्याचार्यों को सौंप कर रास की शिक्षा देने को कहा दोनों आचार्यों ने वल्लभ नामक नर्तक के सहयोग से ब्रज–रास के नवीनीकरण में अपना अमूल्य योगदान दिया इस संदर्भ में इस तथ्य पर प्रकाश डालना आवश्यक है कि नारायण स्वामी और घमंडदेव जी नाट्यशास्त्र के पंडित थे।4 इस तरह हम कह सकते है कि रासलीला भी कहीं न कहीं नाट्यशास्त्र की विषय–वस्तु से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है। जिस प्रकार कथक नृत्य का सम्बन्ध रासलीला से स्पष्ट रूप से समझ में आता है, उसी तरह भारत की अन्य शास्त्रीय नृत्यशैलियों में भी रासलीला की झलक दिखाई देती हैं। कथकली नृत्य में भी 'कृष्ण–अट्टम' अर्थात् कृष्णलीला से ही इस शास्त्रीय नृत्य शैली के प्रारंभ होने के दृष्टांत मिलते हैं। भरतनाट्यम नृत्य के प्रस्तुतिक्रम में पदम में भी श्री कृष्ण पर आधारित भक्ति काव्य के पदों पर नृत्याभिनय के उल्लेख हैं। ओडीसी नृत्य में 'नटवर भंग' कहे जाने वाले 'त्रिभंग' की शोभा का दर्शन होता है एवं जयदेव आदि कवियों की रचनाओं पर नृत्य प्रदर्शन किया जाता है। मणीपुरी नृत्य तो पूर्णतः रासलीला पर ही आधारित है। जहाँ अन्य शास्त्रीय नृत्य, शैलियाँ एकाहार्य अभिनय पर आधारित होती है, वहीं मणीपुरी नृत्य में तो राधा, कृष्ण एवं गोपियाँ सभी अपने चरित्र के अनुरूप वेशभूषा धारण करते हैं एवं रूपसज्जा एवं आभूषणों का चयन करते हैं। इस शास्त्रीय नृत्य की वेशभूषा बहुत ही सुन्दर एवं आकर्षक होती है सभी नृत्य

कलाकारों के माथे पर तुलसी पत्र आकृति वाला वैष्णव सम्प्रदाय का तिलक होता है जो राधा एवं अन्य गोपियों के चेहरे पर पारदर्शी चुनरी के घूँघट के बाद भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। नायक श्री कृष्ण एवं नायिका श्री राधा जी होती हैं एवं अन्य गोपियां मिलकर मंडलाकार में यह नृत्य प्रस्तुत करती हैं। यह नृत्य लास्य प्रधान होता हैं। मणिपुर का सबसे लोकप्रिय नृत्य 'रासलीला' ही है, जो चार प्रकार की होती है – जिसमें सबसे पहला 'वसन्तरास' है, जिसमें रूठी हुई राधा को कृष्ण द्वारा मनाने की लीला होती है यह वैशाख मास में किया जाता है। 'कुंजरास' में राधा–कृष्ण के संयोग का नृत्य है, वियोग नहीं दिखाया जाता। यह अश्विन मास में किया जाता है। कुंजों में श्री कृष्ण एवं राधा के विहार को प्रदर्शित किया जाता है, इसलिए इसे 'कुंजरास' कहते हैं। तीसरा 'महारास' है जो कार्तिक मास में होता है, जिसमें राधा कृष्ण का विरह एवं पुनर्मिलन प्रस्तुत किया जाता हैं। चौथा 'नित्य रास' है जिसे किसी निर्धारित समय में प्रस्तुत करने का बंधन नहीं है इसे किसी भी समय किया जा सकता है जिसमें राधा कृष्ण का सतत विरह–मिलन प्रदर्शित किया जाता है। जैसा कि यह नृत्य एकाहार्य नहीं है अतः इसमें विभिन्न रासों के प्रदर्शन में अलग–अलग केश सज्जा की जाती हैं। गौर लीला एवं कालिया दमन लीला का प्रदर्शन भी इस नृत्य में किया जाता है। यहाँ पर हमने भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैलियों में समाहित 'रासलीला' के तत्वों को देखा, किन्तु ब्रज की 'रासलीला' अपने आप में एक सम्पूर्ण प्रस्तुति होती है। वैसे तो देश के भिन्न प्रांतों में भिन्न–भिन्न तरीके से 'रासलीला' का वर्णन मिलता है। किन्तु यहाँ जो हमारी अभिप्रेत रासलीला है उसका आधार श्रीमद् भागवत पुराण का दशम स्कंध माना जाता है। इसमें ऐसी कथा आई है कि शरद पूर्णिमा की रात्रि में भगवान कृष्ण ने गोपियों के साथ रासक्रीड़ा की थी। इस क्रीड़ा के मध्य ही जब वे अन्तर्ध्यान हो गए तब गोपियाँ उनकी लीलाओं का अनुकरण उनका स्मरण करने लगी। द्वापर युग की इन गोपियाँ के समान ही नटवर नन्दलाल का लीलानुकरण करते हुए उनका स्मरण करने के सद्विचार से ही कृष्ण भक्तों ने 15वीं शताब्दी के प्रारम्भिक चरण में इस ब्रज की रास लीला का आविष्कार किया।5

ब्रज–रास की वर्तमान शैली का 16वीं शताब्दी में पुनर्गठन किया गया था। ईसापूर्व दूसरी शताब्दी से वैष्णव धर्म के प्रचार–प्रसार का जो काम पुराण–सहित्य के द्वारा प्रारम्भ हुआ, सोलहवीं शताब्दी के धर्माचार्यों ने उसकी नींव पक्की करके उसे ऐसी संजीवनी पिलाई कि वह भारतीय संस्कृति की आत्मा बन गयी।6

रासलीला में पात्र चयन का भी नियम निर्धारण रहता है। राधा, कृष्ण, गोपियाँ आदि पात्र केवल 8 वर्ष से लेकर 14 वर्ष की आयु सीमा के अंदर होना चाहिए। राधा एवं अन्य गोपियों का अभिनय भी बालकों द्वारा ही किया जाता है। ये बालक ब्राह्मण परिवार के होते हैं। आयु बढ़ने पर उन्हें राधा, कृष्ण या गोपियों का चरित्र नहीं दिया जाता वे अन्य पात्रों के रूप में प्रदर्शन कर सकते हैं। 'रासलीला' मंडली का एक मुखिया होता है, जिसे स्वामी जी कहा जाता हैं। मंडली के साथ उनके वाद्य वृन्द भी रहते हैं। रासलीला का मंच तखत, गद्दी, चमकीले पर्दे, चादर आदि के द्वारा तैयार किया जाता है। रासलीला के प्रारंभ में श्री राधा–कृष्ण जी सिंहासन पर विराजमान होते हैं। सिंहासन के बगल में वाद्य वादक एवं गायक आदि बैठते हैं। सखियाँ आरती करती हैं एवं राधाजी एवं कृष्ण जी से नित्यरास में पधारने का आग्रह करती हैं – 'हे प्रिया–प्रीतम जू आपके नित्य रास को समय है गयो है, सो कृपा करिकें रास मण्डल में पधारो। जिसके उत्तर में राधाजी कहती है पधारो प्यारे। इस तरह राधा और कृष्ण सिंहासन से उठकर सामने आ जाते हैं एवं नृत्य के बोलों के साथ नृत्य प्रारंभ करते है। श्री कृष्ण अपनी अंगुली पर थाली रखकर घुमाते हैं तो कभी घुटनों पर भ्रमरियां लेते हैं, मोरपंख कमर में बांधकर मयूर नृत्य करते हैं। राधा जी के हाथ पकड़कर घूमते हुए युगल नृत्य करते हैं और फिर गोपियाँ भी इस नृत्य में शामिल हो जाती हैं सभी मिलकर मण्डलाकार नृत्य करते हैं। इस नृत्य प्रदर्शन के पश्चात् श्री कृष्ण के जीवन चरित्र पर आधारित किसी लीला का प्रदर्शन किया जाता है। इस प्रकार 'रासलीला' का मंचीय प्रदर्शन होता है।

शास्त्रीय नृत्यों के अलावा लोकनृत्यों में भी 'रासलीला' के तत्व समाहित हैं। राजस्थान का डाँडिया, घूमर या झूमर, गुजरात का गोफा और गरबा, छत्तीसगढ़ी का डंडा, सिक्किम का शाप–दोह, बंगाल का जात्रा, कश्मीर का हिरक, हिमाचल प्रदेश का मलका, मणिपुर का लाई हरोबा, आंध्र का कोलाटम ये सभी नृत्य 'रास' के अंश–मात्र हैं। कुंडली नृत्य, तिरिपनृत्य मंडि, भ्रमरी, चित्र, कुंडली, सूड, डोम्बी, श्री गदित, भाण, भाणी आदि 'रास' के ही उपनृत्य हैं, जो विस्तृत विवेचन की अपेक्षा रखते हैं।7

भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैलियां हों या लोकनृत्य सभी में 'रासलीला' के अंश दिखाई देते हैं। वर्तमान में ब्रज की पारंपारिक 'रासलीला' का प्रदर्शन कम होता जा रहा है। इसके पीछे कई कारण हो सकते हैं जैसे – चलचित्र, टेलीविजन, मोबाइल आदि, जिनसे आज की युवा पीढ़ी अपना मनोरंजन कर दिग्भ्रमित हो रही है। 'रासलीला' मंडली में अपने आचरण को शुद्ध रखते हुए सात्विक भाव से जीवन यापन करना वर्तमान समय में बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है। आजकल सभी अभिभावक अपने बच्चों को पढ़ा–लिखा कर नौकरी करवाना चाहते हैं, फिर 'रासलीला' की मण्डली में कौन से बच्चे शामिल होंगे। पाश्चात्य संस्कृति की अंधी दौड़ में हमारी संस्कृति धीरे–धीरे लुप्त होती जा रही है। एक जागरूक समाज ही आपकी संस्कृति को संरक्षित एवं परिवर्धित कर सकता है।

संदर्भ –

1. दाधीच, डॉ. पुरू – कथक नृत्य शिक्षा–प्रथम भाग/बिन्दु प्रकाशन जी–7 अयोध्या अपार्टमेंट 9–ए, मनोरमा गंज, इंदौर 452001 (म.प्र.)/चतुर्थ संस्करण 2002/पृष्ठ संख्या – 05
2. दाते, रोशन – कथक – आदि कथक/ग्रंथाली इंडियन एज्युकेशन सोसायटी की म. फुले कन्याशाला, बाबरेकर मार्ग, ऑफ गोखले रोड (उ) दादर, मुंबई – 400028 / प्रथम संस्करण – 2010/ पृष्ठ संख्या – 263
3. दाधीच, डॉ. पुरू – कथक नृत्य शिक्षा शिक्षा द्वितीय भाग/बिन्दु प्रकाशन, श्री लक्ष्मी जनार्दन मंदिर, सराफा बाजार, उज्जैन – 456006/प्रथम संस्करण 1987/पृष्ठ संख्या – 59
4. आजाद पं. तीरथराम – कथक ज्ञानेश्वरी/नटेश्वर कला मंदिर, नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या – 438
5. दाधीच, डॉ. पुरू – कथक नृत्य शिक्षा शिक्षा द्वितीय भाग/बिन्दु प्रकाशन, श्री लक्ष्मी जनार्दन मंदिर, सराफा बाजार, उज्जैन – 456006/प्रथम संस्करण 1987/पृष्ठ संख्या – 56
6. आजाद पं. तीरथराम – कथक ज्ञानेश्वरी/नटेश्वर कला मंदिर, नई दिल्ली/पृष्ठ संख्या – 436
7. गर्ग, डॉ. लक्ष्मी नारायण – कथक नृत्य/संगीत कार्यालय, हाथरस 204101 (उ.प्र.)/दसवां संस्करण, मार्च 2016/पृष्ठ संख्या – 407